भारतीय काव्य शास्त्र में काव्य लक्षण

भारतीय काव्यशास्त्र में सबसे मूल प्रश्न यह रहा है कि काव्य क्या है और किन गुणों से युक्त वाणी को काव्य कहा जाए ? काव्य की लक्षण-चर्चा के माध्यम से आचार्यों ने न केवल काव्य की परिभाषा दी, बल्कि काव्य की आत्मा, शरीर, प्रयोजन और सौन्दर्य को भी स्पष्ट किया।

भारतीय वांग्मय में 'कवि' शब्द अत्यंत सम्मान वाचक रहा है । वेदों में कई बार कवि शब्द का प्रयोग क्रांतिदर्शी , ऋषि, स्रष्टा एवं मनीषी के रुप में हुआ है । भट्ट गोपाल ने 'कवि' शब्द की व्युत्पत्ति करते हुए बताया है कि - "कौति शब्दायते विमृशति रसभावानिति कवि: ।" अर्थात जो रस ,भाव इत्यादि का विमर्श करता तथा उन्हें शब्दायित करता है वह 'कवि' है । 'काव्य' शब्द 'कवि' धातु में 'य' प्रत्यय जोड़ने से बना है, जिसका अर्थ है – कवि का कार्य या कवि की रचना। अर्थात् वह वाक्य या पदावली जो कवि के संवेग, कल्पना और अनुभवों को कलात्मक रूप में अभिव्यक्त करे, उसे काव्य कहा जाता है। व्यावहारिक अर्थ में काव्य दो रूपों में माना गया –गद्य-काव्य एवं पद्य-काव्य ।भामह सहित अनेक आचार्यों द्वारा स्वीकृत है कि शब्द-अर्थ के संयोग से बना काव्य या तो गद्य में होगा या पद्य में।

'लक्षण' शब्द का अर्थ --किसी वस्तु के विशिष्ट धर्म या असाधारण गुण को बताने वाला कथन 'लक्षण' कहलाता है। जब हम काव्य-लक्षण की बात करते हैं, तो हम यह जानना चाहते हैं कि ऐसी कौन-सी अनिवार्य विशेषताएँ हैं जिनके बिना कोई रचना काव्य नहीं मानी जा सकती।

इस प्रकार काव्य-लक्षण केवल परिभाषा नहीं, बल्कि एक मानक है – जिसके आधार पर हम यह निश्चय करते हैं कि कोई वाणी कला-मूल्य से सम्पन्न 'काव्य' है या केवल साधारण 'वाक्य' या फिर साहित्य की कोई अन्य विधा।

प्रमुख संस्कृत आचार्यों के अनुसार काव्य-लक्षण

संस्कृत से लेकर हिन्दी आलोचना तक काव्य-लक्षण पर विचार करते हुए अलग-अलग मत बने – किसी ने मृदु और लालित पदावली को काव्य कहा ,किसी ने शब्द-अर्थ के सामंजस्य को काव्य कहा, किसी ने रस को काव्य की आत्मा माना, तो किसी ने रमणीय अर्थ की अभिव्यक्ति को काव्य कहा। इस प्रकार काव्य-लक्षण भारतीय काव्यशास्त्र की केन्द्रीय धुरी के समान है, जिसके इर्द-गिर्द रस, अलंकार,

ध्वनि आदि सभी सिद्धान्त घूमते हैं। भारतीय काव्यशास्त्र में काव्य-लक्षण का विकास आरंभिक नाट्यशास्त्रीय चरण से लेकर ध्वनिवाद, रसवाद और वाग्वैदग्ध्य-वाद तक फैला हुआ है। संक्षेप में विकास की रेखा इस प्रकार देखी जाती है –भरतमुनि नेअपने भारतीय काव्य शास्त्र के आधारभूत ग्रंथ 'नाट्यशास्त्र' में प्रच्छन्न रूप में कविता को परिभाषित करते हुए कहा है कि---

मृदु ललित पदाढ्यम् गूढ़ शाब्दार्थहीनम् जन सुख पद बोध्यं युक्त्म्नृत्य योज्यम्
बहु कृत रसमार्गं संधि संधान युक्तं स भवति शुभ काव्यं नाटकं प्रेक्षकाणाम्।

भामह नें कविता को शब्द और अर्थ के सहभाव के रूप में परिभाषित करते हुए कहा है कि -- शब्दार्थौ संहितौ काव्यं गद्यं-पद्यं च तद्विधा। अर्थात् जहाँ शब्द और अर्थ परस्पर सहित भाव से उपस्थित हों, वहाँ काव्य है। वे केवल शब्द-चमत्कार या केवल गूढ़ अर्थ को पर्याप्त नहीं मानते; दोनों का सामंजस्य काव्य की पहचान है। उनके मत में –शब्द काव्य का बाह्य शरीर है।अर्थ काव्य की अन्त:सत्ता है।दोनों का समन्वय ही कलात्मक सौन्दर्य उत्पन्न करता है। उदाहरण के लिए, यदि कोई वाक्य अर्थ की दृष्टि से सार्थक है, पर भाषा इतनी रूखी या व्याकरण-दोषयुक्त है कि रुचिकर न लगे, तो भामह की दृष्टि में वह काव्य नहीं बन पाएगा। इसी प्रकार, केवल लयात्मक, मीठे शब्द पर अर्थ शून्य हो तो भी वह काव्य नहीं माना जाएगा।

काव्य लक्षण के संबंध में आचार्य दंडी की स्वीकारोक्ति है कि – "शरीरं तावदिष्टार्थव्यवच्छिन्ना पदावली" – इष्ट अर्थ से अभिहित पदावली ही काव्य है। यहाँ 'इष्ट अर्थ' से आशय उस उद्देश्यपूर्ण भाव या कथ्य से है जिसे कवि व्यक्त करना चाहता है। दण्डी काव्य के 'शरीर' की बात करते हैं, जिससे संकेत मिलता है कि काव्य के भीतर कोई 'आत्मा' भी होगी – जिसे आगे के आचार्य ध्वनि या रस के रूप में ग्रहण करते हैं। उनके मत में भाषा और संरचना इस प्रकार संगठित हो कि अपेक्षित अर्थ स्पष्ट और सौन्दर्यपूर्ण रूप में सामने आए।

मम्मट – दोषरहित, गुणयुक्त शब्द-अर्थ को काव्य मानते हैं। मम्मट का काव्य-लक्षण से सम्बंधित प्रसिद्ध सूत्र है –"तद्दोषौ शब्दार्थौ सगुणावनलंकृति पुनः क्वापि ।" अर्थात् – ऐसे शब्द और अर्थ जो दोष रहित हों, गुणों से युक्त हों , कभी अलंकार सहित और कभी-कभी अलंकार रहित भी हों, वही काव्य हैं। मम्मट के मत में काव्य के तीन मुख्य घटक हैं -(१)दोषरहितता – भाषा, अर्थ, वर्णन, तर्क आदि में कोई

अनुचित दोष न हो।(२) गुण-सम्पन्नता – माधुर्य, प्रसाद, ओज आदि काव्य-गुण काव्य में प्रकाशमान हों। (३)अलंकार –लेकिन अलंकार अनिवार्य नहीं; कभी-कभी अलंकार-रहित वाक्य भी उत्कृष्ट काव्य हो सकता है, यदि उसमें गुण और दोष-शून्यता हो। मम्मट का लक्षण व्यावहारिक आलोचना के लिए अत्यन्त उपयोगी माना गया है, क्योंकि यह काव्य की गुणवत्ता जाँचने के ठोस मानक देता है – दोषों से बचना, गुणों को बढ़ाना और अलंकारों का विवेकपूर्ण प्रयोग।

आनन्दवर्धन ने अपने प्रसिद्ध ग्रंथ 'ध्वन्यालोक' में अपने ध्वनि सिद्धांत का प्रतिपादन करते हुए काव्य के संदर्भ में कहा है कि – "शब्दार्थ शरीरं तावत्काव्यम्" अर्थात शब्द और अर्थ जिसके शरीर हैं वही काव्य है । आनंद वर्धन की यह परिभाषा पूर्णनह हैक्योंकि इसमें केवल काव्य शरीर को ही परिभाषित किया गया है । संभवत इसीलिए आनंद वर्धन ने"काव्यस्यात्मा ध्वनिः" का उद्घोष करते हुए कहा है कि काव्य की आत्मा ध्वनि है, शब्द-अर्थ तो केवल शरीर हैं। उनके अनुसार- ",अर्थात जहां शब्द अथवा उसका वाच्यार्थ व्यंगार्थ के प्रति अपना उपसर्जन कर दे वह उत्तम ध्वनि काव्य होता है । ध्वनि काव्य से आशय काव्य में निहित वह अप्रत्यक्ष अर्थ है जो प्रत्यक्ष शब्दार्थ से परे जाकर रस या विशेष भाव का संचार करता है। उनके अनुसार –जहाँ केवल वाच्य अर्थ हो और कोई गूढ़ संकेत न हो, वहाँ काव्य की ऊँचाई सीमित रहती है।जहाँ शब्द-अर्थ के पार कोई सूक्ष्म 'संकेतित' अर्थ जागता है, वहाँ वास्तविक काव्यत्व उदित होता है। अभिप्राय यह है कि जहां शब्द का सामान्य अर्थ गौण हो जाए तथा विशिष्ट व्यंगार्थ ध्वनित हो वह उत्तम ध्वनि काव्य है। इस प्रकार आनन्दवर्धन ने काव्य-लक्षण को गहराई देते हुए कहा कि महान् काव्य की पहचान उसकी ध्वनित सत्ता से होती है, न कि केवल प्रत्यक्ष कथन से।

आचार्य विश्वनाथ – रसात्मक वाक्य को काव्य घोषित करते हैं- "वाक्यं रसात्मकं कव्यम्"। रस से युक्त वाक्य ही काव्य है। यहाँ 'रसात्मक' शब्द में केवल स्थायी रस ही नहीं, रसाभास, भाव, भावाभास, भावोदय, भावसन्धि, भावशबलता और भावशान्ति तक सब समाहित कर दिए गए हैं। अर्थात् –जब वाक्य पाठक-श्रोता के हृदय में किसी रस का उदय करता है, तब वह काव्य कहलाता है।इस दृष्टि से रस-निष्पादन ही काव्य की सबसे प्रधान कसौटी है। विश्वनाथ के मत को 'रसवाद' की पराकाष्ठा माना गया, क्योंकि वे काव्य-लक्षण को सीधे रस के साथ जोड़ देते हैं, और शब्द-अर्थ, गुण-अलंकार आदि को रस-साधन मानते हैं।

पण्डितराज जगन्नाथ ने अपने प्रसिद्ध ग्रंथ 'रसगंगाधर' में काव्य को परिभाषित करते हुए कहा है कि – "रमणीयार्थ प्रतिपादकः शब्दः काव्यम्।" अर्थात् – सभी शब्द काव्य संज्ञा के अधिकारी नहीं है। केवल रमणीय अर्थ वाले शब्द ही काव्य संज्ञा के अधिकारी हैं। क्योंकि पंडित राज जगन्नाथ ने रमणीय अर्थ को परिभाषित करते हुए कहा है कि अर्थ को परिभाषित करते हुए कहा है की लोकोत्तर आह्लाद जनक प्रत्यय का विषय हो सकने वाला अर्थ ही रमणीय अर्थ माना जा सकता है। पंडित राज की दृष्टि में लोकोत्तर आह्लाद ऐसा चमत्कार जनक आह्लाद है जिसकी भावना से सहृदय सुख- दुख समन्वित इस लौकिक जगत को कुछ क्षणों के लिए भूल जाए और काव्य के भाव जगत को ही वास्तविक एवं सत्य मानकर उसमें रमन करने लगे यही लोकोत्रत्व है और ऐसे चमत्कार जनक लोकोत्तर अर्थ के प्रतिपादक शब्द को ही पंडित राज काव्य की संज्ञा देते हैं।

हेमचन्द्र ने अपने ग्रंथ 'काव्यानुशासन' में काव्य लक्षण के संदर्भ में कहा है कि ----------"तद्दोषौ सगुणौ सालंकारौ च शब्दार्थौ काव्यम्।" – अर्थात् दोष रहित, गुणों से सम्पन्न और अलंकारों से अलंकृत शब्द-अर्थ ही काव्य है। यह लक्षण मम्मट के लक्षण का ही विस्तार है, पर हेमचन्द्र यहाँ अलंकार को भी स्पष्ट रूप से आवश्यक मानते हैं। उनका आग्रह है कि –काव्य में भाषा-दोष न हों ,गुणों का विकास हो तथा साथ ही साथ अलंकार-वैभव भी काव्य को चमक प्रदान करे।इस तरह हेमचन्द्र का लक्षण 'गुण-अलंकार' को काव्य की पहचान के रूप में सामने लाता है।

हेमचंद्र के समान ही वग्भट्ट ने काव्य को परिभाषित करते हुए कहा है- "शब्दार्थौ निर्दोषौ सगुणौ प्रायः सालंकारौ च काव्यम्"-अर्थात निर्दोष , सगुण तथा अलंकार युक्त शब्दार्थ काव्य होता है।

प्रायः सभी प्राचीन आचार्य ने इसी प्रकार काव्य की परिभाषा प्रस्तुत की है। सभी ने शब्दार्थ के सहभाव पर बल दिया है। इस बात को सभी ने आवश्यक माना है कि काव्यगत शब्दार्थ निर्दोष होना चहिए आचार्य दंडी ने तो यहां तक कहा है कि – "तदल्पमपि नोपेक्ष्यं काव्ये दुष्टं कथंचनः ।स्याद्वपुः सुन्दरमपि श्वित्रेणैकेन दुर्भगम्।" अर्थात सुंदर से सुंदर चेहरा भी कुष्ठ के एक छोटे से दाग की उपस्थिति से विद्रूप हो उठता है। अतः काव्य में एक भी दोष उपेक्षणीय नहीं है आचार्यों नें पद ,पदांश ,वाक्य , वाक्यांश ,अर्थ ,प्रबंध और रस कुल सात प्रकार के काव्य दोषों का इस दृष्टि से विस्तार पूर्वक विवेचन किया है, जिससे मुक्त होकर शब्दार्थ उत्तम काव्य

संज्ञा का अधिकारी बनता है ।

काव्य-लक्षण के प्रमुख आयाम

उपरोक्त आचार्यों के मतों से काव्य-लक्षण के कुछ मुख्य आयाम उभरते हैं – शब्द-अर्थ का सामंजस्य – भामह, दण्डी, मम्मट, हेमचन्द्र आदि ने इस पर बल दिया। दोष-गुण और अलंकार – मम्मट, हेमचन्द्र इत्यादि के यहाँ काव्य-मूल्यांकन की आधारशिला हैं। ध्वनि (संकेतित अर्थ) – आनन्दवर्धन के मत में काव्य की आत्मा। रस – विश्वनाथ के अनुसार काव्य का प्राण, रसात्मकता ही काव्यत्व की पहचान है ।रमणीयता – जगन्नाथ के अनुसार काव्य का सार है जो अर्थ को आनन्ददायक बनाती है। इन्हीं आयामों को ध्यान में रखकर बाद की हिन्दी आलोचना में भी काव्य-परिभाषाएँ गढ़ी गयीं, जिनमें रस, भाव, कल्पना, संवेदना, भाषा-सौन्दर्य आदि का समन्वय दिखाई देता है।

विभिन्न मतों की तुलनात्मक चर्चा

(क) शब्द-अर्थ केन्द्रित दृष्टि -----भामह, दण्डी, मम्मट, हेमचन्द्र आदि आचार्य शब्द और अर्थ के सम्बन्ध, उनकी शुद्धता तथा सौन्दर्य पर अधिक बल देते हैं। भामह – शब्द-अर्थ का सहभाव।दण्डी – इष्ट अर्थ से युक्त पदावली।मम्मट – दोषरहित, गुणयुक्त शब्द-अर्थ।हेमचन्द्र – गुण-अलंकार-युक्त शब्द-अर्थ। इनके यहाँ रस और ध्वनि का महत्त्व है, पर काव्य-लक्षण का सीधे आधार शब्द और अर्थ ही बनते हैं। (ख)- रस केन्द्रित दृष्टि----विश्वनाथ का मत है कि “वाक्यं रसात्मकं काव्यम्” – रसौदय ही काव्य की पहचान है। यहाँ रस केवल शृंगार या वीर जैसे स्थायी रस तक सीमित नहीं, बल्कि सभी प्रकार के भाव-अनुभवों को सम्मिलित करता है। इस मत के अनुसार –यदि रस-निष्पादन नहीं हुआ, तो चाहे कितना ही अलंकार या गुण हों, वह श्रेष्ठ काव्य नहीं।यदि रस की अनुभूति है, तो साधारण भाषा में भी काव्यत्व सम्भव है। (ग)-ध्वनि केन्द्रित दृष्टि ----आनन्दवर्धन ध्वनि को काव्य की आत्मा कहते हैं; उनके लिए रस भी ध्वनि के माध्यम से ही उदित होता है। वाच्य अर्थ (प्रत्यक्ष अर्थ) – काव्य का बाह्य पक्ष।लक्ष्यार्थ लेकिन ध्वन्यार्थ – काव्य का संकेतित या निहित पक्ष।जहाँ ध्वन्यार्थ प्रमुखता से उदित होता है, वही परिपूर्ण काव्य है। इस दृष्टि में काव्य-लक्षण के भीतर सूक्ष्म अर्थ-स्तर की खोज प्रमुख है।(घ)- रमणीयता केन्द्रित दृष्टि--जगन्नाथ का “रमणीयार्थप्रतिपादकः शब्दः काव्यम्” काव्य में सौन्दर्य

और आनन्द की अनिवार्यता पर बल देता है। यहाँ रस, ध्वनि, अलंकार, सभी 'रमणीयता' के अंग बन जाते हैं।यदि अर्थ मन को आनन्द न दे, तो वह काव्य नहीं; चाहे शब्द कितने भी कलात्मक क्यों न हों।

काव्य-लक्षण और हिन्दी काव्य-चिन्तन

भारतीय काव्यशास्त्र के इन सिद्धान्तों ने हिन्दी काव्यालोचना को गहरे रूप से प्रभावित किया। भक्तिकाल के कवि रस और भक्ति-भाव की दृष्टि से काव्य को देखते हैं, जो विश्वनाथ और आनन्दवर्धन की परम्परा से मेल खाती है। रीतिकाल में अलंकार, शृंगार और वर्णन-कौशल पर जोर रहा, जो मम्मट-हेमचन्द्र की गुण-अलंकार-परक परम्परा से जुड़ता है। आधुनिक काल में 'अनुभूति', 'संवेदना' और 'व्यक्तित्व-प्रकाश' को भी काव्य-लक्षण का हिस्सा माना गया, जो ध्वनि, रस और रमणीयता – तीनों से संवाद करता है। इस प्रकार हिन्दी आलोचना में काव्य-लक्षण केवल एक सूत्र नहीं, बल्कि बहु-आयामी अवधारणा बन गया, जिसमें परम्परा और आधुनिकता, दोनों के तत्व उपस्थित हैं।

काव्य-लक्षण के आधार पर काव्य-मूल्यांकन

काव्य-लक्षण का उद्देश्य केवल परिभाषा देना नहीं, बल्कि काव्य का परीक्षण-मानदंड भी प्रदान करना है। किसी भी कविता का मूल्यांकन हम निम्न बिन्दुओं पर कर सकते हैं –भाषिक शुद्धता और प्रवाह – क्या भाषा दोषरहित, सुबोध और सौम्य है? (मम्मट, हेमचन्द्र) शब्द-अर्थ का सामंजस्य – क्या शब्द और अर्थ एक-दूसरे के अनुकूल हैं, कहीं शब्द हल्के और अर्थ भारी या उल्टा तो नहीं? (भामह) गुणों की उपस्थिति – माधुर्य, प्रसाद, ओज आदि काव्य-गुण कितने प्रबल हैं? (मम्मट) अलंकार-वैभव – उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, श्लेष आदि अलंकारों का कितना स्वाभाविक और सार्थक प्रयोग है? (हेमचन्द्र) रस-निष्पादन – क्या कविता पढ़ते-सुनते कोई रस या भाव-अनुभूति जागती है? (विश्वनाथ) ध्वनि और संकेत – क्या प्रत्यक्ष अर्थ से परे कोई गहरा अर्थ या व्यंजना है, जो पाठक को भीतर तक छूती है? (आनन्दवर्धन) रमणीयता – क्या सम्पूर्ण कविता सौन्दर्यबोध और आनन्द का अनुभव कराती है? (जगन्नाथ) इस बहुस्तरीय मूल्यांकन से हम देख सकते हैं कि भारतीय काव्यशास्त्र में काव्य-लक्षण केवल सैद्धान्तिक चर्चा नहीं, बल्कि

व्यावहारिक आलोचना की जड़ है।

एक उदाहरण के आधार पर समझ

मान लीजिए किसी कवि की दो पंक्तियाँ हैं (यहाँ केवल कल्पित उदाहरण मानिए) –“सूरज निकला, दिन हुआ।” – अर्थ स्पष्ट है, पर न ध्वनि-वैभव, न रस, न रमणीयता; यह सामान्य वाक्य है।“अंधेरी रात के आँचल से झाँक उठा सुनहरा बालक।” – यहाँ ‘सूर्य’ को ‘सुनहरा बालक’ कहा गया, ‘अंधेरी रात का आँचल’ कहा गया; शब्द-चयन, रूपक, कल्पना, रस और ध्वनि – सब मिलकर रमणीयता और ध्वनि उत्पन्न करते हैं।पहली पंक्ति भले तथ्य-वर्णन हो, पर भारतीय काव्यशास्त्र के अधिकांश काव्य-लक्षण उस पर लागू नहीं होंगे; दूसरी पंक्ति पर भामह का शब्द-अर्थ-सहभाव, मम्मट के गुण-अलंकार, आनन्दवर्धन की ध्वनि, विश्वनाथ का रस और जगन्नाथ की रमणीयता – सभी लागू हो सकते हैं।इस तुलना से स्पष्ट होता है कि काव्य-लक्षण वस्तुतः कलात्मकता, सौन्दर्य और भावानुभूति की पहचान है, न कि केवल सूचना-प्रधान भाषा की।

उपसंहार

भारतीय काव्यशास्त्र में काव्य-लक्षण पर चली दीर्घ परम्परा यह दिखाती है कि हमारे आचार्य काव्य को केवल शब्दों का खेल नहीं, बल्कि हृदय-अनुभूति, सौन्दर्य-बोध और आध्यात्मिक आनन्द का माध्यम मानते रहे हैं। भामह से लेकर जगन्नाथ तक हर आचार्य ने काव्य के किसी न किसी पक्ष – शब्द-अर्थ, गुण-अलंकार, रस, ध्वनि, रमणीयता – को केंद्र में रखकर काव्य-लक्षण दिया, और इन्हीं से मिलकर एक समग्र भारतीय काव्य-दृष्टि बनी।